जब मन भी मानै. हाय ! अब वीरनाविन मेरा मान कौन करेगा ? "शीलवंती शीलंवती" कहकर मुझको कौन पुकारेगा? हाय वीरन हाय वी—(मूर्छित हो पछाड़ खा गिरपड़ी.)

हिरण्यम०—हाय ! प्राणप्यारेने तो पयान किया और इस पापी प्राणने पयान न किया; बड़े आश्चर्यकी बात है (शिरपीटती और पिया पिया पुकारती सासके पास आई.) हे नाथ ! मैं आज लौं सास ससुरके सन्मुख मुख खोलकर न बोली, आज मेरी वह भी आन न रही. हे प्राणवल्लभ ! इस हतभागिनीको अकेली छोड़ तुम कहां चलेगये ! मुझे तुम्हारे विना एक एक पल शत शत कल्पके समान व्यतीत होता है, अब इस समय-आतिरिक्त मरनेके मुझको और कोई उपाय दृष्टि नहीं आता.

मालती—हे वधू ! धैर्य धर धैर्य धर, मेरे हृदयको नहीं देखती, जो कुलिससे भी कठोर होगया, पुत्र गया और मैं जीवती बैठी हूं.

राग जोगिया.

हिर०—मेरे प्रीतमने मुझको विसारा,
अब मैं कैसे करूंगी गुजारा;
हाय प्रीतम हुए मेरे योगी,
मेरी कैसे उमर ये रहेगी।
तुम जो विष घोलकर मुझको दोगी,
जन्मभर गुण न भूलूं तुम्हारा ॥ १ ॥

सेजपै मैं अकेली डरूंगी,
हाय यह विपता कैसे भरूंगी ।
इससे पहिलेही विष खा मरूंगी,
मैंने मनमें येही ढंग विचारा ॥ २ ॥

चम्पा०—धीर धर धीर धर मेरी प्यारी !,
बहुत रो रोकै जी मति दुखारी ।
भज हरे कृष्ण गोविंद मुरारी,
जो करैं पार बेड़ा तुम्हारा ॥ ३ ॥

हिर०—एक तो हैगी उमर मेरी बाली,
और धनीने विपति मुझपै डाली ।
अब मैं कैसे करूं मेरी आली,
मुझपै यह दुख न जाता सहा री ॥ ४ ॥
किस यतनसे पियाको मैं पाऊं, ।
कौनसे जोशीके पास जाऊं ? ।
जिसको विपतामें अपनी सुनाऊं,
ऐसा है कौन प्यारा हमारा ॥ ५ ॥
अब यही बात मैंने विचारी,
मेरा मरनाही है ठीक प्यारी ।
मुझको लादे जहर या कटारी,
झगड़ाही दूर होजाय सारा ॥ ६ ॥

चम्पा०—हाय यह क्या वचन तू कहै है,
मेरी सुन सुनकै छाती दहै है ।

मेरे जीमें न जी जब रहे है,
तू कहेहै मरूं खा कटारी ॥ ७ ॥

हिर०—अब मैं सब तजके योगन बनूंगी,
देशदेशान्तरोंमें फिरूंगी; ।
अपने प्रीतमको मैं ढूंढ़ लूंगी,
जौनसे देशको वह सिधारा ॥ ८ ॥
मेरा अपराध कीजो क्षमा अब,
कंतसे मिलनेको जाती हूं अब; ।
देखना चाहती हूं मैं वह छब,
योगिया वेष पीने जो धारा ॥ ९ ॥

अरे पापी प्राण ! तू अभी नहीं निकला ? हाय ! मैंने माता पिताकी प्रीतिका स्मरण न किया; अपने बिरानोंकी अपेक्षा नहीं की; सबका स्नेह परित्याग करके जिसकी शरण ली; वह प्राणप्यारा कहां गया ? अरे निर्दई प्राण ! अब तू क्यों यह महाकठिन दुःख दिखा रहा है. हाय ! मुझ अभागिनीको मृत्यु भी स्वीकार नहीं करती, उसे भी मेरा शरीर छूनेसे घृणा आती है. हे प्राणाधार ! अब मैं किसकी शरण जाऊं ! अब कौन है मेरा.

मालती—हे प्यारी ! तेरे विलापकलाप हमसे नहीं सुने जाते, तू व्याकुल मत हो, हम सब तेरे प्राणपतिको खोजने चलें हैं.

हिरण्यम०—अरी ! अन्धेको क्या चाहिये, केवल दो- आँखें.

मैं तो यह चाहती हूं, चाहे सर्वस्व जाता रहै, परन्तु प्राणनाथ मिलजाँय. हे देवी पार्वती ! मेरी इस दीन दशापर तुमहीं दया करो, और मेरे प्राणवल्लभको यह अनुमति दो, कि, शीघ्र घरको लौट आवें.

विजय०—(सचेत होकरके) अभी पुत्र न आया ?

मंत्री—महाराज ! अभी तो नहीं.

विजय०—अब सब मिलकर चलो, कहीं ढूंढ़ेंगे(चलदिये.)

मंत्री—महाराज ! अब नगरसे बहुतदूर निकल आये, चन्दनवाड़ी आगई; आप इसी माधवीलताके नीचे वास कीजिये, आपका शरीर बहुत थकगया होगा, मैं सब स्थानोंमें सुदर्शन और सुलोचनके अनुशरणको जाता हूं.

विजय०—अच्छा, जाओ. बहुतसे चतुर चतुर वीरोंको साथ लेजाओ, आनन्दभवन, पुष्पवाटिका, मालतीलता, केशरक्यारी, त्रिपुरानन्द, इन सब स्थानोंमें अच्छी भांति अनुशरण करना.

मंत्री—जो आज्ञा महाराजकी (गया).

विजय०—हे भद्रे ! इतने दिन पुत्रका और मेरा सत्संग रहा, अब मैं पुत्रहीन अकेला रहकर क्या करूंगा ? बड़े आश्चर्यकी बात है, सदा आज्ञाकारी रहा, अब अजानकी भांति छोड़कर चलदिया: जातेसमय एक वार भी मुखसे

न बोला, यह चातुर्यता और निठुरता उसने कहां सीखी ? अब मैं किससे जाकर बात करूंगा, मैं तो अब बिपक्ष होगया, दशोंदिशा सूनी दिखाई देती हैं. चारों ओर अन्धकार छा-रहा है, अब जीवनकी क्या आश है ?

मालती—(आँखोंमें आँसू भरकर) हे कन्त ! मुझको ऐसा जान पड़ता है कि, इस वंशका अन्त आ गया, क्योंकि जहां जहां ढूंढ़नेका ठिकाना था, सब स्थान ढूंढ़लिये, परन्तु कहीं पुत्रका पता अबतक न लगा, अब क्या किया जाय ? व्यतिरिक्त मरनेके और कोई उपाय दृष्टि नहीं आता.

विजय०—यह बात तो तुम्हारी सब सत्य है, परन्तु यह समय अधैर्यका नहीं है, जब तुमही अधैर्य होगी तो यह पुत्री और पुत्र वधू अभी रो रोकर मरजाँयगी, और देखो तुम्हारे आगे मंत्री और वीरोंको सुदर्शनकी अनुशरणके लिये भेजा है; कदाचित् मिलही जाय ?

मालती—महाराज ! मुझको कई दिनसे कुलक्षणही दृष्टि आते हैं, पुत्रके मिलनेकी कोई आशा नहीं जान पड़ती-

(मंत्रीका आगमन.)

विजय०—(दूरसे आता देखकर) कहो मंत्री कहीं पता लगा ?

मंत्री—(नेत्रोंमें जल भरकर) कहीं भी पता नहीं ! वह कहीं दूरदेश चलदिये.

विजय—०कुछ भी पता लगा ?

मंत्री—हां महाराज! इतना तो सुना है कि, एक योगन कहींसे आई थी, उसने आकर वीणा बजाई; और राजकुमार उसपर मोहित हो, उसके संग चलनेको उपस्थित हुए, और उनको अकेला समझ सुलोचन उनके साथ गया.

विजय०—अब क्या उपाय करना चाहिये.

मंत्री—मेरी बुद्धि इस समय ठिकाने नहीं.

विजय०—अच्छा! मैं तो इसी लतामंडपमें वास करूंगा, अब नगरमें जाकर क्या होगा, मैंने विचारा था कि, शुदर्श-नको राज्य देकर, मैं अपनी अवस्था परमेश्वरके भजनमें व्यतीत करूंगा; परन्तु मेरी मनकामना परमेश्वरने पूरी न की, और उसके बदलेमें—दुःख दिखाया, अब तुम सब स्त्री-पुरुषोंको अपने संग नगरमें लेजाओ; और हितचित्तसे राज-काजकर प्रजापालन करो.

मंत्री—महाराज! मैं अब आपके चरणारविन्द छोड़कर कहां जाऊं, जन्मसे तो आपके साथ रहा, सुलोचन सुदर्शनके संग, और मैं आपके संग.

विजय०—अच्छा. इनको पहुँचाकर, और राजका भार अपने छोटे पुत्र सुदक्षको सौंप तुम मेरेपास चले आना.

(मंत्री नगरको जाता है और राजा भगवतभजनमें नियुक्त होता है और यवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननाम नाटकका चतुर्थगर्भाङ्क समाप्त.

तृतीयाङ्क.

स्थान वन.

(सुलोचन मनहीमनमें मग्न होता है. और योगनसे बारम्बार कहता है.)

सुलोच०—हे योगन ! परमेश्वरने काम तो पूरा बनाया है.

योगन०—परमेश्वर सदाहीसे सज्जनोंकी रक्षा करता रहा है. देखो ! गजको ग्राहसे छुड़ाया, द्रौपदीका चीर बढ़ाया, पाण्डवोंको लाक्षामन्दिरसे बचाया, ब्रजवासियोंके हेत गोवर्द्धनपर्वत उठाया, उसका नामही जनरंजन भयभंजन है.

सुलोच०—जो परमेश्वर ऐसा न करे तो एकही बार पृथ्वीपर प्रलय होजाय.

योगन०—महाराज ! परमेश्वर कहीं अबके मेरा मुँह उजियाला करै, यह कालिख मेरे मुँहको लगती है; क्यों कि, सुदर्शनको और आपको योगी बनाकर मैंही लाई थी, दूसरे लावण्यवतीको क्या मुँह दिखाती, और कदाचित् मैं जाती भी और यह कथा सुनाती, तो वह उसी समय अपने प्राणघातकर मरजाती; परमात्माने इन सब बातोंसे बचाया; मेरे लेखे तो आज परमेश्वर उतर आये.

सुलोच०—कितनी रात और शेष रही है.

योगन०—तीन प्रहर रात तो व्यतीत होगई, एक प-हर रात और शेष रही है, सो भी अब बातों बातोंमें कटी जाती है.

(शुकसारिकाका उसी बनमें प्रवेश)

शुक—मैना ! देखो वह दोनों वियोगी पत्थरकी चट्टा-नपर बैठे सुदर्शन सुदर्शन कह रहे हैं.

सारिका—तो चलो ! उसको उसके मित्रका समाचार पत्र दे दें.

शुक—अवश्य दे दो.

सारिका—कहनेकी क्या अवश्यकता है, पत्री कण्ठसे खोलकर दे दो.

शुक—ओहो विरही जन ! कोई तुम्हारा प्यारा मित्र विछड़ गया है ?

सुलोच०—हां शुकराज ! तुमको कैसे विदित हुआ ?

शुक—तुम्हारे मित्रका नाम क्या है ?

सुलोच०—(गद्गदकण्ठसे) सुदर्शन.

शुक—और तुम्हारा नाम क्या है ?

सुलोच०—मेरा नाम तो भाग्यहीन है, परन्तु नगरके लोग मुझको सुलोचन कहते हैं.

शुक—तुम्हारा मित्र मुझको मिला था, दिन रात "सु-लोचन रटता था" और कभी कहता था "हे लावण्यवती हे लावण्यवती."

सुलोच०—तुमने हमारे मित्रको कहां देखा था ?

शुक—हेमकूटपर्वतकी चोटीपर एक कुसुमारण्य है, वहा एक राक्षसने बन्दीग्रहमें डाल रक्खा है.

सुलोच०—तुमसे सुदर्शनने कुछ कहा ?

शुक--एक पत्री दी है.

सुलोच०--कहां है.

शुक—मेरे कण्ठमें बँधी है, मैं तुम्हारे निकट आता हूं खोल लेना परन्तु देखिये कहीं मुझको पकड़ मतलेना कि, कहीं सुदर्शनकी भांति मैं भी चिठ्ठी लिखवाता फिरूं.

सुलोच०—भला मुझसे ऐसा हो सकेगा तुम तो भलाई करो और मैं छल करके पकड़ लूं, यह कृतघ्नी लोंगोंके काम हैं, बाहर कुछ और पेटमें कुछ और. (पत्री खोलकर नेत्रोंसे लगाता है और हृदयसे लगाता है.)—लो योगनजी तुम पढ़ो.

योगन०—महाराज ! तुमहीं पढ़ो.

सुलोच०—स्वस्तिश्री सर्वानंददायक, अनेक योग्यलायक, गंगाजलनिर्मल, राकाशशिसमशीतल, पावनपवित्र मित्र, सुलोचनकी सेवामें तुम्हारे मित्र सुदर्शनका जुहार; प्यारे ! अबतक तो यह प्राण आपकी आशा आशामें रहा, परन्तु अब रहनेका ठीक नहीं; मेरा अपराध क्षमा करना, आपकी कृपादृष्टिमें कोई सन्देह नहीं, मैं अपने कर्मोंका फल भोग रहा हूं; जो मैं आपकी आज्ञा मानता तो क्यौं इस विपत्तिके बन्धनमें पड़ता, आपके उपकार मुझको घड़ी २स्मरण होते

हैं; हे मित्र ! जो मैंने कहा सो आपने स्वीकार किया; और मुझ भाग्यहीनसे आपका एक काम भी न निकला; मैं उस बातको कभी न भूलूंगा; जो आप तात मातको छोड़ आधी रात मेरे साथ हो लिया, और मेरे पीछे जो जो कष्ट सहे उनको मेराही जी जानता है; और बालपनमें जो जो उपकार आपने मेरे संग किये, उनका बदला एक जन्ममें क्या सौजन्ममें भी नहीं दे सकता. हे मित्र ! जब तुमसे बिछड़कर पुष्पवाटिका देखने गया था, उसी समय एक दुर्मुखनाम राक्षस मुझको उड़ा लाया; और वहां पुष्पोद्यानमें एक मन्दिर है, उसमें मुझको बन्दकर रक्खा है; जो मेरे भाग्यमें आपका दर्शन मिलना है तो होजायगा, और जो मैं मर गया तो मेरा अपराध क्षमा करना, और योगनजीसे मेरा बहुत बहुत विनय कह देना, परन्तु प्यारी लावण्यवतीका वियोग चित्तमें बनाही रहैगा. हे मित्र ! कोई उपाय हो सके तो करना, अधिक क्या लिखूं.

योगन०—महाराज ! महापुरुषके कहनेकी विधि तो मिल गई.

सुलोच०—आपकी कृपासे परमेश्वर सुदर्शनको भी मिलाही देगा.

(महापुरुषका प्रवेश.)

महापुरु०—अरे सुलोचन !

सुलोच०—हां महाराज !

महापुरु०—चल मैं कुसुम लेने जाता हूं.

सुलोच०—अच्छा महाराज ! चलता हूं, चलो.

महापुरु०—(योगनको देखकर) सुलोचन ! यह योगन वियोगनसी तेरे संग कौन है ?

सुलोच०—महाराज ! यह योगन भी मेरी सहायक और सुखदायक है, इसकी कथा बहुत विस्तारसहित है; और इस समय मेरा चित्त भी ठिकाने नहीं है, मैं फिर बैठकर सावधानीसे आपको सुनाऊंगा.

योगन०—परमेश्वर करै; इस समय वह राक्षस वहां न हो, तो सब कार्य सिद्ध होजाय.

सुलोच०—जो हमारा भाग्य अच्छा है तो नहींही होगा !

योगन०—और जो किसी बन्धनागारमें बँधा होगा, तो तुम क्या करोगे ?

सुलोच०—इन महापुरुषकी दयासे, उसी समय सब बन्धनागारोंको तोड़, सुदर्शनको वेखटके निकाल लाऊंगा.

महापुरु०—(उँगली उठाकर) सुलोचन वह देखो ! पुष्पारण्यमें मालतीलताके निकट जो मनोहर मन्दिर है उसमें तुम्हारा मित्र बैठा है.

सुलोच०—(अपना मंत्र पढ़कर सुदर्शनके निकट जाकर हृदयसे लगाकर गद्गदकण्ठसे) हे मित्र ! आज इन महापुरु-

षकी कृपासे आपका दर्शन मुझको होगया, नहीं तो मैं अपने प्राण खोही चुका था.

योगन०--इनके अनुग्रहकी महिमा कहांतक वर्णन करूं, मेरी जिह्वामें इतनी सामर्थ्य नहीं, इनहींकी कृपासे आपका दर्शन हुआ; वह कौन राक्षस महापापी दुष्टात्मा था; जो तुमको इस अत्यन्त ऊंचेपर्वतके शिखरपर ले आया; अब चाण्डाल कहां है.

सुदर्शन—(नेत्रोंमें नीर भरकर) धन्य है उसपरमात्मा परब्रह्म परमश्वेरका कि, जिसकी कृपासे आपलोगोंका दर्शन होगया और जो राक्षस मुझको ले आया था, वह रात दिन मेरी रक्षा करता रहा, अब चार दिनसे वह मुझको नहीं दिखाई दिया; न जानिये कहां चला गया; यह मैं नहीं कहसकता कि, किसके भाग्यसे वह दुर्भागी नष्ट होगया, अब शीघ्र कंचनपुरको चलिये.

सुलोच०--मुझको तो मार्ग भी नहीं जानपड़ता कि, कंचनपुर किधर है.

सुदर्शन--भाई ! यहांसे शीघ्रचल दो, कदाचित् वह दुष्ट फिर न आजाय.

सुलोच०—यह सन्देह तो हमको भी है.

सुदर्शन—इतनेपर भी आपकी इच्छा चलनेकी नहीं ?

सुलोच०—(चरणोंमें शिर नवाकर) महाराज ! जब आ-

पने हम दीनोंपर इतनी दया की है तो अनुग्रह करके कंचन पुरका मार्ग बतादीजिये.

महापुरु०—कंचनपुर तो यहांसे बहुत थोरे है, इस पहाड़से उतरतेही उत्तरकी ओरको कंचनपुरका बाग दृष्टि आता है.

(महापुरुष अन्तर्ध्यान होता है और यह तीनों चकित हो इधर उधर देखने लगते हैं.

योगन०—महाराज ! यह कोई हमारे भाग्यसे देवताही प्राप्त होगये थे, अब चलो कंचनपुर चलैं. (सब चले.)

सुदर्शन—अब तो यह नगरकेसे चिन्ह दृष्टि आते हैं, वा कोई नगर आगया.

योगन०—(चलते चलते) महाराज ! यही है कंचनपुर ! वह देखो ! सन्मुख लावण्यवतीका बाग है, जिसके कारण आपने इतना परिश्रम उठाया है; अब जो आज्ञा हो तो मैं लावण्यवतीके पास जाकर आपके आनेका समाचार सुनाऊं और आप तबतक इस पुष्पवाटिकामें विश्राम कीजिये.

सुदर्शन—अच्छा शीघ्र सुध लेना, भूल मत जाना; और लावण्यवतीसे हमारी ओरसे बहुत २ कुशल पूँछना.

(योगन लावण्यवतीके पास जाती है और यवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटककातृतीयगर्भाङ्क समाप्त.

चतुर्थाङ्क.

स्थान लावण्यवतीका मन्दिर.

(लावण्यवती, पलँगपर पड़ी २ यह रागिनी गा रही है और स्वर्णलता और सरोजिनी समीप बैठी पंखा झल रही हैं.)

राग भैरवी.

लाव०—सखी नहीं आई भये छै मास.

इत उत तकत रहत निशिवासर, नित चित रहत उदास ।
कल कल कहत मास छै बीते, काको करौं विश्वास ।
चैन लेन नहीं देत मैनरिपु, सदा दिखावत त्रास ।
दूनी दूनी बढ़त विरहानल, लखि शशिको परकास ।
नींद न आवत अन्न न भावत, गई भूँख अरु प्यास ।
प्रेमलताहू विरमरही कहुं, मोहि गई यह मास ।
चारों ओर अग्निसी लागी, मानहु खिले पलास ।
शालिग्राम शरण ली तेरी, छाँड़ सबनकी आस ॥

हे सरोजिनी ! अब मैं क्या करूं जो जो यत्न जिसने बताया सो तो करचुकी, अब कोई उपाय तुझको स्मरण हो तो तूही बता, छै महीने प्रेमलताको भी हो गये, न जानिये उसकी क्या गति हुई ? मुझको अनुमानसे विदित होता है, कि उसको किसी सिंह व्याघ्रने खा लिया. जो वह जीती होती तो कदापि इतना विलम्ब न करती ! जो आप न आती तो पाती

तो अवश्यही पगती. हाय दई तूने मेरा सब ऐश्वर्य छीन मुझे इसगतिको पहुँचाया.

स्वर्णल०—हे प्यारी ! इतनी व्याकुल मत हो, मनमें धैर्य धारण करो, प्रेमलता अब अनेही चाहती है.

लावण्य०—अरी ! तुमने मुझे इसी भांति छल २ कर छै महीनेसे रक्खा है, कहाँतक धैर्य धरूं, अब मुझसे धैर्य नहीं धरा जाता, धैर्यही धैर्यमें मेरा सब काम बिगड़ गया, अव मुझे किसीकी प्रतीत नहीं; मैं आपही योगन बनकर अपने प्राणनाथको ढूंढ़ लाऊंगी, और जो नहीं मिला तो उसीके ध्यानमें अपने प्राण खो दूंगी.

सरोजि०—हे प्यारी ! ऐसे बोल न बोलो; इन बोलोंको सुन २ हमारा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है, हाय! हमारे सन्मुख तुम योगन बनो, और हम यहां सुख भोगें, बड़े आश्चर्यकी बात है, प्रथम तो प्रेमलता आतीही होगी, और जो वह नहीं आई तो हम सब योगन बनकर नगर २ और ग्राम २ ढूंढ़ेंगी. और तुम्हारे प्राणप्यारेका पता लगावेंगी, निःसन्देह रहिये.

लावण्य०—अब मुझको किसीका विश्वास नहीं, सबको देख चुकी, अब तुम सब मेरे पाससे हट जाओ, मेरा किसीसे बात करनेको जी नहीं चाहता.

राग बिहाग.

पियाबिन तरस रहे दोउ नैन,

प्रथम लगाय आग यह शत्रू, अब दौरत जललेन ॥ १ ॥
तलफ तलफ सब दिवस गंवायो, तारे गिन गिन रैग।
कैसे करूं कौनपै जाऊँ, परै न छिनको चैन ॥ २ ॥
हृदयमाहिं शूलसे लागत, सुन चातकके बैन।
चैन लेन नहिं देत तनकहू, जिसपै पापी मैन ॥ ३ ॥
रक्त मांस नहिं रह्यो तनक तन, सूख सूख भई कैन।
शालिग्राम नयन भये बैरी, विसरो सब सुख सैन ॥ ४ ॥

अरे दई ? तेरे मनोरथको मैं भलीभांति जानगई, तू मेरे प्राणोंका ग्राहक है, फिर क्यों देर करता है, ले प्राणही ले. कहीं तुझ हत्यारेसे पीछा तो छूटै, एकवार मरकर क्या दोवार मरना है, परन्तु घड़ी घड़ीका क्लेश मुझसे नहीं सहा जाता.

स्वर्णल०—(नेत्रोंमें जल भरकर) हे प्यारी ! तुम आपही आप क्या कहती हो ! और क्यों इतना क्लेश उठाती हो, मुझको आज प्रातः कालही अच्छे २ शगुन हुए हैं. इससे मुझको भलीभांति विदित होता है कि, आज प्रेमलता अवश्य आवेगी. मैं प्रणकरके यह बात कहती हूं, और इसके संगमें दूसरा प्रण और कहती हूं कि, परमेश्वर तुम्हारी मनोकामना भी आजही पूरी करदेगा, यह बात मैं सौगन्द खाकर कहती हूं.

लावण्य०—अरी चल ! तू घड़ी २ शगुनही मनाती है.

स्वर्णल०--जो आजका मेरा शगुन पूरण न होय तो तुम्हारा जी चाहे सो कीजो.

लावण्य०---अच्छा सखी ! जो आज प्रेमलता आगई तो तुझे मुहँ माँगा पारितोषिक दूंगी, और जन्म जन्मान्तर तेरा गुण न भूलूंगी.

(प्रेमलताका प्रवेश.)

सबसखी--(हँसती हँसाती इधर उधरसे आगई) लो लाओ प्यारी ! क्या पारितोषिक देती हो.

लावण्य०--अरी ! जो चाहिये सो ले लेना, मैंही तुम्हारी हूं, मेरे भाग्य ऐसे कहां थे, तुम्हारेही भाग्यसे प्रेमलताका दर्शन होगया, मुझे इससे बात तो करने दो.

सबसखी---आली ! बात करनेका पारितोषिक तो और देना पड़ैगा, यह तो प्रथम शुभागमनका पारितोषिक देना चाहिये. दूसरा इच्छापूर्वक तुम्हारी इच्छा पूर्ण होनेपर पारितोषिक लेंगी.

लावण्य०---अरी ! पारितोषिक कैसा ! यह तन, मन, धन सब तुम्हाराही है.

प्रेमल०---(चरण छूकर) हे प्राणप्यारी लावण्यवती ! तुम्हारे दर्शनकी लालसा थी, सो परमेश्वरने आनन्दपूर्वक तुम्हारा दर्शन करा दिया.

लावण्य०---(शीघ्र उठाकर हृदयसे लगा लिया) हे प्यारी ! तूने मेरे पीछे बहुत कष्ट उठाया, परन्तु मैं तेरे ऋणसे ज-

न्मभर उऋण नहीं होसकती. अब आनन्दसहित मुझको सब वृत्तान्त सुना, कहाँ २ गई और क्या २ देखा ?

प्रेमल०—मार्गका वृत्तान्त कुछ बूझो मत. अनेक अनेक वन, पर्वत, नदी, नाले, नगर, ग्राम, घूमघामकर कंचनपुर पहुँची, और वहां सुदर्शन स्वप्नमें तुम्हारा चन्द्रानन निहार चकोरकी नांई व्याकुल होरहा था, और तुम्हारे दर्शनका अत्यन्त अभिलाषी था.

लावण्य०—सखी ! वह नगर कैसा था ?

प्रेमल०—कञ्चनपुरकी शोभाका जैसा वर्णन मैंने सुना था; उससे भी दशगुणा अधिक दृष्टि आया. कैसे २ मनोहर मन्दिर बने हैं ! कैसे २ चौड़े २ सुन्दर स्वच्छ मार्ग हैं, जिनपर कहार जल छिड़क रहे हैं, जहाँ तहाँ फुहारे छू-ट रहे हैं, शीतल मन्द सुगन्ध सनी पवन झकोर रही है, वा-णिज्यकी कैसी वृद्धि हो रही है, मानो सब संसारकी वस्तु परमेश्वरने इसी स्थानपर इकट्ठी करके आनन्दस्थल बनाया है, सब मनुष्य अपने अपने काममें तत्पर हैं, स्थान स्थानपर प्रतिहार अस्त्र शस्त्र धारण किये, सावधानीसे घूम रहे हैं; अ-नेक प्रकारकी वस्तु हाटोंपर बिक रही हैं, ग्राहकोंके झुण्ड-के झुण्ड बाजारमें धूमधामसे घूम रहे हैं, और जहाँ तहाँ विज-यसिंहके न्यायकी चर्चा होरही है, नगर बहुत देखे परन्तु कञ्चनपुरकी समान नगर पृथ्वीपर दूसरा नहीं देखनेमें आया. कञ्चनपुर क्या है मानो कञ्चनकी खानि है, जब स-

न्ध्याका समय हुआ तो मैंने पुष्पारण्यमें विश्राम किया; और जब आधी रात हुई तो मैंने वीणा बजाया, और एक राग भी गायी, और तुम्हारा सब वृत्तान्त, रागमें और वीणाके स्वरोंमें सुनाया, तब तो वह घबराया हुआ मेरेपास आया, और मुझसे कहा, जो तू लावण्यवतीका दर्शन करा दे तो जन्मजन्मान्तर तेरा गुण न भूलूंगा, मैं तो यह चाहतीही थी, किसी प्रकार यह राजकुमार मेरे संग चले

लाव०—फिर क्या हुआ ?

प्रेमल०—कथा कहानी बहुतसी है, निदान उसको योगी बना, मार्गमें अनेक २ कष्ट सहकर, यहांतक ले. आई हूं; और उसको पुष्पवाटिकामें ठहरादिया है. अब जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो.

लाव०—हे प्यारी ! मैं तेरी विद्याकी प्रसंसा कहांतक वर्णन करूं, जो मैं अपना तन मन धन भी नौछावर करूं तो तौभी उऋण नहीं हो सकती.

प्रेमल०—प्यारी ! यह सब तुम्हाराही प्रताप है. अच्छा, अब तुम्हारी क्या इच्छा है ?

लाव०—सखी ! मेरी इच्छा सब तुम्हारेही हाथ है मुझसे क्या हो सकता है ?

प्रेमलता—तो तुम शीघ्र शृंगार कर राजकुमारके दर्शनको चलो. क्योंकि, वह अकेला बैठा घबराता होगा.

लाव०—अरी स्वर्णलता !

स्वर्णल०--हां प्राणप्यारी ! क्या आज्ञा है ?

लाव०--झटपट मेरी शृंगारपिटारी ला, और मेरा शृंगार बना दे.

स्वर्णल०--प्यारी ! शृंगारकी सब सामग्री उपस्थित है, शीघ्र मज्जनकर नेत्रोंमें अंजन डाल, भालपर लाल ईंगुरकी बिन्दी लगा, रूपको सौगुणाकर, चारु चीर सज नाकमें बेशर लटकन लटका, कण्ठमें पचलड़ी, चम्पाकली, मोहनमाला, हारपहर, अंगमें चोवा, चन्दन, चर्चि, कंचुकी कस, कटिमें क्षुद्रघण्टिका, पावोंमें झांझन, कड़े, नूपुर, पगपान पहन, सब शृंगार ऐसा कर जो सची और रति लज्जित हो तेरे सन्मुख मुख न करें; और पूर्णमासीका चन्द्रमा तेरा मुख देखकर लोटपोट होजाय, मार्तण्ड अपना घमण्ड छोड़ खण्ड खण्डमें चक्र काटता फिरे.

लावण्य०—सखी ! यह शृंगार तो करचुकी, अब क्या करूं ?

प्रेमल०--सब सखियोंको साथ ले बागको चलो.

(लावण्यवती सब सखियोंके संग पुष्पवाटिकाको जाती है, और यवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटके प्रथमो गर्भाङ्कसमाप्तः

द्वितीय गर्भाङ्क.

स्थान बाग.

(सुदर्शन और सुलोचन परस्पर वार्तालाप कररहे हैं, और सुदर्शन यह रागिनी गा रहा है.)

राग मालकौंस.

सुद०—हाय दई कहा भई अबतलक योगन नहीं आई;
के कहीं भूली पन्थ कै किन्ही दुश्मन बहकाई ॥
कै मेरी चित्तचोर शशिमुखी घरपर नहिं पाई ।
अपना सगा कोई मित्र यहां नहिं देता दिखलाई ॥
जिसको सगा समझा था उसने भी करी दुश्मनाई ।
छुटा राज अरु पाट बना योगी घरसे लाई ॥
अब देकर वह दगा किधर जा छिपी अरे भाई ।

सुलोचन—मित्र ! क्यौं इतने शोकाकुल होते हो ! आती होगी, और जो न आवेगी तो और कुछ उपाय करैंगे.

सुदर्शन—भाई ! मुझको विश्वास नहीं जो वह आवे.

राग भैरवी.

जगतमें सब स्वारथकी प्रीत ।
इतउततकत बकत सम्भ्रमसम, सब निशि भई व्यतीत ।
अबताईं योगन नहिं आई, चार पहर गये बीत ॥ १ ॥
रहत चकोर चन्दबिन व्याकुल, चन्द न ताको मीत ।
अङ्गपतङ्ग दहत दीपकबिन, दीपक करत अनीत ॥ २ ॥

सुन घन घोर मोर नाचत हैं, गाय गायकर गीत ।
बादर आदर करत न ताको, नेक न समझत रीत ॥ ३ ॥

भाई ! विचारो तो, क्या कारण हुआ जो योगन अव-तक न आई, वह तो यह कह गई थी, मैं राजकुमारीको संग लेकर अभी आती हूं.

सुलोच०—भाई ! तुम्हारे चित्तमें बडी शीघ्रता है, तुम अपने समान सबका जी जानते हो, सबसे छिपछिपाकर कोई नई बात बनाकर वह आवेगी, क्या राजकन्याओंका आना ठट्टा है.

सुदर्शन—जो राजकुमारी न आती तो योगन तो आती.

सुलोच०—योगन अकेली आकर क्या करती, वह तो तुम्हारे पाससे गईही है.

सुदर्शन०—भाई ! मनको धैर्य तो होता.

सुलोच०—अधैर्यही क्या है, अधैर्य तो उससमय सम-झना, जब सन्ध्या हो जाय.

सुदर्शन०—तो चलो भाई ! प्रातःकालका समय है, इ-तने पुष्पोंहीको देखकर मन बहलावें.

मालिन्—कौन मनुष्य पुष्पवाटिकामें कुलाहल म-चारहा है, इधर आओ !

सुदर्शन—भाई ! क्या राजकुमारी आगई.

सुलोचन—नहीं मित्र ! कहां है राजकुमारी, जो राज-

कुमारी होती तो ऐसे निठुर और तीक्षण वचन कभी न बोलती, यह तो बागकी मालिन् ज्ञात होती है.

सुदर्शन—ठीक है भाई ! मालिनही है.

मालिन्—(उच्च स्वरसे) सुना नहीं क्या बधिर हो ?

सुदर्शन—(लम्बी स्वास भरकर) हां मालिन् ! इस समय तो बधिरही हैं, वरन बधिरसे भी अधिक बधिर, जो तुम्हारे बागमें न आते तो क्यौं बहिरे कहलाते.

मालिन्—जो ऐसा पश्चात्ताप करते हो तो स्त्रियोंके बागमें विनाबूझे क्यौं चले आये, तुमने नहीं सुना, यह राजकन्या लावण्यवतीकी पुष्पवाटिका है, उसकी आज्ञा है कि, कोई मनुष्य यहां न आने पावे, जो उसने सुन पाया तो इसीसमय तुम दोनोंको मारकर पृथ्वीमें गड़वादेगी, इस लिये वृथा इस कालकी फांसीमें क्यों फँसते हो ?

सुदर्शन—हमको मरने जीनेना कुछ सन्देह नहीं, निदान एकदिन मरनाही होगा. परन्तु तुम वारम्वार क्या राजकुमारी राजकुमारी कररही हो, हमने सैकड़ों राजकुमारी देखी हैं, क्या तुम्हारी राजकुमारी जगतसे निराली है ? जो बागमें नहीं ठहरने देती, बाग इसीलिये लगाते हैं कि, परदेशी लोग आवें, और बागमें विश्राम करें और आराम पावें. एक तुच्छ वाटिकापर इतना अभिमान. चलो, बहुत बक बक मत करो. हम योगी वियोगी लोगोंको किसीके बाग उपवनसे क्या प्रयोजन, घूमते घूमते इस पुष्पवाटिकामें पुष्प देखने

चलेआये थे, कि सुन्दर २ फूलोंको देख मनको प्रसन्न करें, उसके बदलेमें यह फल मिला कि, बधिर कहलाये.

मालिन्—यह तो कहो, यहां आपका आना कैसे हुआ ?

सुदर्शन—भाग्यवश, यह सब प्रारब्धकी प्रेरणा है; न जानिये यह भाग्य कहां कहां ले जायगा; और किस गतिको पहुंचावेगा. (आपहीआप) हाय! एकदिन वह था, कि, सहस्रों पथिक हमारे बागमें विश्राम करते थे; अब एकदिन यह है कि, मालिन् हमको दुर्वाक्य कहै और हम सुनैं, दैवकी गति महादुस्तर है, उसकी महिमा किसीसे जानी नहीं जाती.

मालिन्—(मनहीमन) यह तो किसी राजाके पुत्र जान पड़ते हैं. (प्रगट) महाराज ! मैं क्रोधसे नहीं कहती; यहां किसी पुरुषके विश्राम करनेका आदेश नहीं और लावण्यवतीके कोपका ठिकाना नहीं, मुझको तुम्हारा सुन्दर स्वरूप देखकर दया आती है; न जानिये वह तुम्हारेलिये क्या दण्ड दे, जो कोई अनुचित बात हुई तो मेरे जीकी जलन जन्मभर न जायगी.

सुदर्शन—जो हुआ सो देखा, और जो होगा सो देखा जायगा, परन्तु यह तो कहो वह किसी दिन बागमें पर्यटन करनेको आती है ?

मालिनि—आठवें सातवें दिन.

सुदर्शन—अब कौनसे दिनकी बारी है ?

मालिन्—आज आनेकी चर्चा तो सुना है.

सुदर्शन—कुछ हमारा काम भी तुमसे निकल सकता है?

मालिन्—आपका क्या काम है.

सुलोच०—जो तुम जी लगाकर सुनो और करो तो कहैं.

मालिन्—आप निसन्देह कहिये; मैं तनमनसे उद्यत हूं; परन्तु कृपा करके अपना नाम, ग्राम मुझे बतादीजिये जो मेरे मनका भ्रम और सन्देह जाता रहै.

सुलोच०—तुमको सन्देह क्या है.

मालिन—मुझको कहते भय लगता है.

सुलोच०—क्या हम सिंह हैं.

मालिन्—मुझको आप सिंहसे भी अधिक सिंह जान पड़ते हो; सत्य तो यह है, मुझे आप किसी राजाके पुत्र विदित होते हो, परन्तु यह भ्रम है कि, योगियावेष किस-कारण धारण किया, आपकी सूरतपर वीरत्व और तेजत्व झलक रहा है, क्या कहीं गूदड़में लाल छिपते हैं?

सुलोच०—तुम बड़ी चतुर हो, हम तुम्हारी चतुराईकी प्रशंसा कहांतक वर्णन करें, परमेश्वरने तुमको सब योग्य बनाया है, और हमको दृढ़ आशा है कि, हमारा कार्य भी तुम्हारेही द्वारा होगा.

मालिन्—मैं किसयोग्य हूं, यह सब आपही लोगोंके चरणोंका प्रताप है, आप आपना अभिप्राय निसन्देह

कहिये, जहांतक मुझसे हो सकेगा, आपका काम शिर आँखोंसे करूंगी.

सुलोच०—सच तो यह है कि, इस राजकुमार मेरे मित्रको तुम्हारी राजकुमारीके दर्शनकी अभिलाषा है, उसीके अनुरागमें घरवार त्याग, वैराग्य लेलिया है, और सहस्रों दुःख सहकर यहां आया है.

मालिन्—क्यों इतना दुःख सहा ?

सुलोचन—तुम्हारी राजकुमारीने इसका चित्त चुरालिया है; अब इसका दुःख मिटाना और मृत्युसे बचाना तुम्हारा काम है, परमेश्वरने हमको विरहके समुद्रमें डूबता देख , तुमको हमारे हितके लिये, आनन्दरूपी वोहित (नाव) प्रगट करादिया, अब हमको पार जाना बहुत सहज है.

मालिन्—यह सब बात आपकी मिथ्या है, प्रथम तो हमारी राजकुमारी चोर नहीं, और जो चोर भी मानलिया, तो हमारी राजकन्या सहस्रों कोसपर तुम्हारे प्यारेका चित्त चुराने कहां गई थी: उसने तो कभी घरसे बाहर पाँव भी नहीं धरा: इसके व्यतिरिक्त हमारी राजदुलारीने कोई मोहनीमंत्र भी नहीं सीखा, जो इनका मन मोहलेती फिर किस कारण तुमने हमारी राजदुलारीको चोर बताया ?

सुलोचन—तुम तो नाकुछ वातपर क्रुद्ध होगई ?

मालिन्—आपने बातही ऐसी कही; जो न क्रोध आवे तो आवे.

सुलोचन—अब क्रोधको शान्तिकर, इस दीनपर दया करो !

मालिन्—देखो, हमारी राजकुमारीको फिर कभी ऐसी बात मत कहना, और ऐसा दोष मत लगाना.

सुलोचन—अभी हमाराही दोष न छूटा, औरको दोष कैसे लगा सकते हैं, हाय! हमारे भाग्यकी तो मृत्यु भी रसातलको चली गई.

मालिन्—मनमें धैर्य धारण करो, इतने शोकाकुल मत हो, परमेश्वर आपकी मनोकामना पूरी करैगा, परन्तु यह बात सत्य सत्य बता दो कि, तुम लावण्यवतीके फन्देमें कैसे फँसगये.

सुदर्शन—सत्य तो यह है मैं रात्रिमें पड़ा सोता था, आचानक स्वप्नमें मृगनयनी, पिकवयनी, लावण्यवती, सोलह शृंगारकिये, एक कोमल कमलका फूल हाथमें लिये, मेरे सन्मुख आ खड़ी हुई, मैं उसकी बांकी झांकी देख लोट पोट होगया, जब मैंने चाहा कि, कुछ कहूं, इतनेमें मेरी आंख खुल-गई तो कुछ भी नहीं, केवल मन्दिरही मन्दिर था, उसी-घड़ीसे चित्तको उच्चाटन होगया, भूँख प्यास जाती रही, नींद नयनोंसे उड़गई, जिधरको देखता हूं, उधर वह मनमो-हनीही मनमोहनी दृष्टि आती है, मानो दशोंदिशा शीश भवन होगया, पलभरको पलक नहीं लगती, रोते रोते, आँखें लाल पड़गईं, शरीरमें रक्तका नाम न रहा, वारम्वार यही

कहता हूं, कि हे परमेश्वर! या तो उस चित्तचुरानेवालीका दर्शन करादे, नहीं तो यह प्राण प्राणप्यारीकी भेंट है.

मालिन्—विधाता किसीको विरहका रोग न लगावे.

सुदर्शन—और जो उड़कर लगजाय तो क्या हो, ऐसा उपाय बताओ जो लगा रोग छूटजाय.

(सहचरीका प्रवेश)

सहचरी—सावधान हो जाओ सावधान हो जाओ! श्रीमती, राजकुमारी आती है

मालिन्—छिपजाओ २ राजकुमारी आगई! जो उसने तुमको देखलिया तो मेरी और तुम्हारी दोनोकी कुशल नहीं; इसी समय सबका वध करादेगी.

सुदर्शन—(हँसकर) अरी मूर्ख! छिपनेसे क्या काम चला, इस समय तो आनन्दमय होना चाहिये, क्योंकि, प्राणप्यारी हमारे सन्मुख आवे और हम छिपें; बड़े आश्चर्यकी बात है, परमेश्वरने सहस्रों दुःख दिखाकर तो यह समय दिखाया है; और अब हम छिपजायँ, कदापि नहीं छिपनेके, जो चाहे सो हो अब प्राणप्यारीका दर्शनकर अपने नेत्रोंको सुफल करूंगा.

(सखियोंसमेत लावण्यवतीका प्रवेश.)

लावण्य०—(दो योगियोंको देख चकित हो मनहीमन) हे विधाता! यह क्या आश्चर्य है. प्रेमलता तो कहती थी, मैं तेरे प्राणप्यारे सुदर्शनको अपने संग लाई हूं; फिर यह दूसरा कौन

है, इनका स्वरूप देखकर मन्मथका मन भी लज्जित होगा, अब मैं कैसे जानूं कि, इनमें मेरा प्राणनाथ कौनसा है ?

हे विधाता ! जो तूने प्राणपतिको दिखाया, तो इस भ्रमजालमें डालदिया, अब मेरी मति चकित है, न इधरकी न उधरकी, किसीसे कहनेकी, न सुननेकी क्या करूं क्या न करूं, प्रेमलता निगोड़ी भी इसी समय पीछे रहजानेको थी, वह भी अभीतक न आई, हाय ! मैं हत्यारी किससे बूझूं परमेश्वरने बिपत्तिमें मेरे प्राण डालदिये, मालिनसे बूझूं, कदाचित् इसीसे भेद निकल आवे (प्रगट) अरी मालिन ?

मालिन्—हां राजकुमारीजी ! क्या आज्ञा है.

लावण्य०—यह कौन हैं जो योगिया वेष किये वे खटक बागमें घूम रहे हैं ? सच बता. हमारी विना आज्ञा इनको यहां किसने ठहराया, मैं अभी तेरा और इनका वध करादूंगी. तुमको इतना ध्यान न हुआ, कि, मैं राजकुमारीकी आज्ञा क्योंकर उल्लंघन करूं चल हट मेरे सन्मुखसे, मुझको मुख मत दिखा.

सुदर्शन—हे राजेश्वरी ! इस मालिन् बिचारीका क्या दोष है; आपके अपराधी तो हम हैं; जो आपकी इच्छा हो सो दण्ड हमको दीजिये, हम आपके सन्मुख उपस्थित हैं.

लावण्य०—कौन हो तुम ? किसके कहनेसे वाटिकामें चले आये; इसी समय हमारे बागसे बाहर निकलजाओ,

नहीं तो प्राणोंसे हाथ धोने पड़ेंगे, मुझको तुम्हारा सुन्दर स्वरूप देखकर दया आती है.

सुदर्शन—तुम तो दयाकी मूलही ठहरी.

लावण्य०—कुछ न कुछ कहे ही जाते हो, तुमको मरनेका भय नहीं.

सुदर्शन—विनाही मारे मृतकसे अधिक मृतक हूं, कोई क्षणका स्वास शेष है, अबतक तो यह प्राण कभीका निकलगया होता, तुम्हारे दर्शनकी आशापर अटक रहा है, अब इस चित्तचकोरने तुम्हारा मुखचन्द्र देखलिया, अब यह प्राण भलेही निकलजावें, मुझको किञ्चिन्मात्र भी संशय नहीं, परमेश्वरने मेरे मनकी अभिलाषा पूर्ण करदी.

लावण्य०—तुमको मेरे दर्शनका उत्साह कैसे हुआ ?

सुदर्शन—जबसे स्वप्नमें तुम्हारी अनोखी छवि दृष्टि पड़ी, उसी दिनसे खानपान त्याग, वैरागी वन, बन २ घूमनेलगा, पर इस मित्र और इस तुम्हारी प्यारी योगनकी सहायतासे तुम्हारा दर्शन होगया.

लावण्य०—अहो प्यारे ! मेरी भी यही गति है, मैंने भी तुम्हारे लिये अनेक कष्ट सहे. हे जीवनमूल ! जबसे स्वप्नमें आपने अपना मनमोहनरूप दिखाकर मेरे मनको मोहलिया, उसी दिनसे क्षण २ काटना कठिन होगया, जब मुझे तनमनकी सुध न रही तो स्वर्णलता और प्रेमलताने मेरे ऊपर दया करके, सब राजकुमारोंकी चित्रपटी लिख २ कर दिखानीं

आरम्भ की, जब तुम्हारी चित्रपटी मेरी दृष्टि पड़ी, तो मैं उसी समय मूर्छित हो पृथ्वीपर गिरपड़ी.

सुदर्शन—हाय ! मेरे कारण इतना कष्ट सहा, फिर क्या हुआ ?

लावण्य०—मुझको अचेत देख, प्रेमलता और स्वर्ण लताने हाथोंहाथ उठालिया, और समझाया, कि, प्यारी ! किसी भांतिका सन्देह मत कर, मैं तेरे प्राणवल्लभको बहुत शीघ्र लाती हूं; इतना कह प्रेमलता योगन बन यहांसे चलीगई, न जानिये किस उपायसे तुमको यहां ले आई, और मेरा मनोरथ पूर्ण किया.

सुदर्शन—इसी परम चतुर प्रेमलताने मेरा मनोरथ सिद्ध किया, इसीके प्रतापसे मुझको आपका दर्शन हुआ, यह गुण मैं जन्म जन्मान्तर न भूलूंगा.

लावण्य०—प्यारे ! धन्य है इसके यश और साहसको.

प्रेमलता—यह सब काम आपहीके प्रतापसे हुआ. मेरी क्या सामर्थ्य है, मैं तो आपकी दासी हूं.

लावण्य०—प्यारे ! मेरे लिये आपने बहुत परिश्रम उठाया, और धन्य है आपके मित्रको जो विनाप्रयोजन इतना कष्ट उठाया. अब तुम दोनों मित्र योगियावेष उतार अच्छे २ वसन आभूषण पहन मनको प्रसन्न कीजिये, और शयनभवनमें फूलोंकी शय्या बिछ रही है, वहां चल कर दोनों मित्र

शयन कीजिये, और मैं आपके चरणकमल पलोटकर आपका श्रम दूर करूंगी.

प्रेमलता—आप हमारे सन्मुख इनके चरण दाबोगी, तुम्हारी कोमल कमलसी कलाई कसकने लगेंगी, मैं इनके चरण चापती हूं, और तुम अपने लोचनचकोरको प्यारेका मुख शरद्चन्द्र दिखा सुख दीजिये.

लावण्य०—प्यारी! जो तुम्हारे करनेका काम था, सो तुम करचुकी, अब प्यारेके चरणारविन्द दाबना हमारा काम है.

प्रेमलता—अच्छा प्यारी! तुम इनके चरण दाबो, मैं सुलोचनके चरण चापती हूं, क्योंकि इन्होंने भी तुम्हारे कारण अत्यन्त कष्ट सहा है.

लावण्य०—(हँसकर) क्या प्यारी! तुमने भी मार्गमें इनसे प्रीति करली.

प्रेमलता—प्यारी! अपने मनसे बूझो, और जो ऐसा भी करूं तो क्या अचम्भा है, मेरा नामही प्रेमलता परमेश्वरने रक्खा है, परन्तु अपनी तो कहो, कल तुम्हारी क्या गति थी.

लावण्य०—(सकुचाकर) प्यारी! मेरी गति कुगति तो तेरेही हाथ है, और तेरेही बल और पराक्रमसे सुदर्शनका दर्शन हुआ, नहीं तो मेरे भाग्य ऐसे कहां थे?

प्रेमलता—चलोरी सखी! सब चलो. इनको अपने मनगुनकी बातें करलेने दो.

लावण्य०—(मुसकुराकर) सखी ! तेरी ठठोली अभी नहीं गई ?

स्वर्णलता—सखी ! राजकुमारसे दो बातें कहनेकी मेरी भी इच्छा है.

प्रेमलता—तू भी कहले ? जो तेरे जीमें आवे.

स्वर्णलता—देखो महाराज ! इतनी तो मेरी विनय है, हमारी राजकुमारी कोमलांगी है, तो सखी, एक गीत मैं भी राजकुमारको सुना दूं.

प्रेमलता—तू भी अपने मनकी अभिलाषा पूरी करले.

(राग कल्यान.)

स्वर्णल०—न जाने रसबातें गोरी.

उरपर संपुट कुमुदकलीको कैसे निबहै चोरी।
पतिचर्चा सुनि दृगन रोस हुइ विहसत सुख मोरी ॥ १ ॥
कर सोलह शृंगार पहन गहना पोरी पोरी ।
डरति डरति आई है, गलेमें डाल प्रेम डोरी ॥ २ ॥
क्या जाने रस रीति प्रीतिकी बातें यह भोरी ।
गुड़िया खेले दिन रात अभी है उमर बहुत थोरी ॥ ३ ॥
परछांई लख दुरत अकेली चलत झुण्ड जोरी।
प्रेमरंग अँगड़ाय निहारत दिये भाल रोरी ॥ ४ ॥

आप तो परम चतुर हैं, कोई बात आपसे कहने योग्य नहीं, परमेश्वर आपकी जोड़ीको सदा आनन्द रक्खे, यही हमारी अशीश है.

लावण्य०—आज तुम्हारा हँसनेका दिन है, जो चाहे सो हँसी करलो.

प्रेमलता—मैं तो वारंवार विधातासे यही वर मांगती हूं, कि, तुम्हारी युगलजोड़ी युग युग बनी रहे जिसको देख२ मेरा कलेजा ठण्डा हो. (सब गई).

लावण्य०—हे प्यारे ! वाटिकामें कैसे २ सुन्दर सुमन खिल रहे हैं, जिनसे लिपटती लिपटाती मन्द २ सुगन्धित पवन चली आती है, जिसने मन्दिरमन्दिरको सुगन्धसे महकाया है.

सुदर्शन—(आकाशकी ओर देखकर) हे चन्द्रानने ! देखो, चन्द्रमाकी चाँदनी कैसी निर्मल शोभा दे रही है, जिसको देख २ चाँदनीके फूल फूले अंग नहीं समाते, और मदनकेसे वान तान २ विरहीजनोंके हृदयमें माररहा है, मालतीका मेल चँबेलीसे अलबेलीही रीतिसे होरहा है, तुम्हारा सुन्दर स्वरूप देख, चम्पा चपासा दृष्टि आता है, आज लज्जावंती लज्जाकी मारी सुकड़कर बैठ रही है, तुम्हारे सन्मुख मुख नहीं कर सकती.

लावण्य०—परमेश्वर बड़ा दयालु और दीनरक्षक है, जिसने स्वप्नकी मायाको साक्षात् कर दिखाया, ऐसे परमात्माको वारंवार नमस्कार और दण्डवत है. अब मेरी मनोकामना पूर्ण होगई, आपका दर्शन करलिया, अब मुझे आपके सामने त्रिलोकीकी मायाकी भी आवश्यकता नहीं.

सुदर्शन—प्यारी! यह अपनी बड़ाई करावी हो; मैं आपकी शीलता और कोमलताका कहांतक वर्णन करूं, वारंवार परमेश्वरसे यह वर माँगता हूं, कि, कुछ दिनके लिये, शेषजीकी भांति मुझको सहस्रमुख दे तो प्यारीके अंगकी सुन्दरताका वर्णन करूं.

लावण्य०—प्यारे! मुझमें सुन्दरताही क्या है, जो वर्णन करोगे.

सुदर्शन—प्यारी! तुम्हारेसदृश सुन्दरी स्वरूपवान् आजतक संसारमें विधाताने रचीही नहीं.

कवित्त.

रमाको कहा है रति रम्भाको कहा है,
ते बखानै विधि चारोमुख, चारो देव नौगुनो।
शचीको कहा है, अरु कामको कहा है,
अरु चन्द्रको कहा है जामें दीखत सौ औगुनो।
चम्पाको कहा है, चामीकरको कहा है,
चारु करके विचारसार निराधारलौं गुनो।
हे प्यारी तिहारो आज रूप सब रूपनते,
दुगुनो है तिगुनो है चौगुनो है सौगुनो॥ १॥

लाव०—(हँसकर) प्यारे! क्यों मेरी झूंठी प्रशंसा कर मुझको लज्जित करते हो, वा मेरे मिस किसी औरकी प्रशंसा कररहे हो, मैं तो आपके चरणोंकी दासी हूं.

स्वर्णल०—अरी प्रेमलता! अब चलो, आधीसे भी अधिक रात गई, और इनकी आंखोंमें भी निद्रा छारही है।

राग सोरठ.

नींदसे दोऊ अति अलसात,
झुक झुक परत नयन भये राते, कहत अटपटी बात।
मीचत आंख शब्द नहिं निकसत, सँभर सकत नहिं गात।
इत उत तकत चकित दुइ चौंकत, रजनी है कै प्रात।
अब तुम चलो इन्हैं सोवन दो, थोरी रहगई रात।
अब इनको कर लेन देहु सखी, सब मनगुनकी बात॥

(सखी सब जाती हैं; और यवनिका पतित होति है).

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकमें द्वितीय गर्भाङ्क समाप्त.

तृतीय गर्भांक.

स्थान बाग.

(बागमें झूला पड़ा है, और सब सखी झूल रही हैं).

प्रेमलता—अरी स्वर्णलता! लावण्यवतीको जगाकर तो ला. वह तो प्रीतमके प्रेममें ऐसी मतवाली होगई, घरबारकी भी सुधि नहीं.

स्वर्णलता—अच्छा प्यारी! लावण्यवती और सुदर्शन दोनोंको लाती हूं.

सरोजिनी—आज बड़े आनन्दका दिन है, राजकुमारी और राजकुमारको एकसंग झुलावेंगी.

प्रेमलता—स्वर्णलता! यह बात तो तूने भली सुन्दर विचारी. जा शीघ्र ला.

स्वर्णलता—(शयनभवनके द्वारपर जाकर) प्यारी लावण्यवती! प्यारी लावण्यवती!! उठो, देखो कैसी काली २ घटा चारों ओरसे उमड़ती चलीआती हैं, मोर बोल रहे हैं, कोकिला कूक रहीं हैं, पपीहा पिया २ पुकार रहा है, चपला चमक २ विरहीजनोंको धमका रही है, नन्ही २ फुहारें पड़ रहीं हैं, सब स्त्री अपने २ मन्दिरोंमें अपने प्राणप्यारोंके संग झूल रहीं हैं, तुमको सुधि है कि नहीं, कल काजरी तीज है, हम सब सखियोंने भी, आज बागमें हिंडोला गाड़ा है, और तुम्हारी राह देखरहीं हैं. अब अपने प्राणनाथको साथ लेकर तुम भी चलो, प्रेमप्रीतिसे दोनोंको झुलावेंगी.

लावण्य०—अच्छा प्यारी! मेरी भी यही इच्छा है, कि, आज अपने प्राणनाथके साथ झूलूं.

(दोनों शृंगार करते हैं, और झूलेपर बैठते हैं; सखियें झोंके देती हैं, और यह रागिनी गाती हैं]

राग झंझोटी.

यह दोउ झूलैं री मनके मोहनहार।
एकओर सुन्दर राजदुलारी एकओर राजकुमार ॥
मानो रविरति बैठ हिंडोरा झूलत पाँवपसार।

आनंद छाय रह्यो दशदिशिमें शोभा अगम अपार ।
सावनमास सुहावन भावन फूल रही फुलवार ॥
रेशम डोर जड़ाऊ पटली सघन कदमकी डार ।
गरजत घन चमकत अति चपला बूंदन परत फुहार ॥
ठौरठौर मिलि मोर नचत हैं झींगर रहे झिंगार ।
भांति भांतिके पक्षी बोलत शीतल चलत बयार ॥
फूले कमल सरोवरमाहीं भ्रमर करत गुञ्जार ।
चहूंओर छाई हरियाली अद्भुत विपिनबहार ॥
लिपटिरही वरबेलि द्रुमनसों हर्षत युगल कुमार ।
बरन बरनके लाल सोसनी सखियन किये सिंगार ॥
विविधप्रकार बजावत बाजे गावत राग मलार ।
यह बानक लखि चन्द मन्द भयो रति रतिपति गये हार ।
दुरत फिरत शोभा शोभा लखि सब धन धाम बिसार ।
नाथ आपसों यह वर माँगत हम सब बारम्बार ॥
यह जोरी चितचोर मनोहर जियत रहै युग चार ॥

सरोजि०—सखी ! सबकी आज्ञा होय तो एक रागिनी मैं भी गाऊं.

स्वर्णल०—क्यौं मैना ! तुम कैसे न गाओगी, तुमने तो सब चानकही बनाया है,

राग कालङ्गड़ा.

सरोजि०—आज इन दोउनपै बलि जइये.

रोम रोमसों छवि वर्षत है, नैना निरखि सिरइये।
रूपराशि मृदुहास ललितछवि, उपमा कहत लजइये ॥
यह बानक यह बाग मनोहर, हे विधि नित दरशइये।
जोरी गोरी पीप्यारीकी, ऐसेहि सदा झुलइये ॥

प्रेमलता—प्यारी! तुम्हारी रागिनीने तो सबके मन मोहित करलिये.

स्वर्णलता—सखी! मेरी रागिनी तो मन मोहित करने योग्य नहीं, परन्तु इस समयकी लावण्यवती सुदर्शनकी अनुपम छटा मनको आकर्षण करती है.

प्रेमलता—सखी! अब चलो बहुत बिलम्ब हुआ, माता पिता बहुत रिसहे होते होंगे, अब कल फिर आवेंगी.

लावण्य०—अच्छा आली! चलो, परन्तु प्राणनाथसे आज्ञा लेलूं.

प्रेमलता—तो तुम्हारे प्राणनाथसे मैं कहूं.

लाव०—प्यारी! तुम कहो, चाहे मैं कहूं, परन्तु मेरी इच्छा यह है कि, प्राणप्यारेका मन दुःखी न हो.

प्रेमलता—चाहे मातापिताका मन दुःखी हो.

लाव०—आली! तू तो एक न एक बातमेंसे बात नई निकालती है.

प्रेमलता—सखी! सत्य कहनेवाला सदा बुरा होता है.

लाव०—(लज्जासे नीचे नयन करके) हे प्राणवल्लभ! तुम्हारे चरणारविन्दोंके छोड़नेको यह मनमधुकर नहीं चा-

हता, परन्तु मातापिताकी आज्ञाको भी उल्लंघन करना अच्छा नहीं, और सुशील स्त्री पुरुषको लोकलाजसे भी डरना उचित है; जो आज्ञा हो तो अब मैं स्थानको जाऊं, कल फिर इसी-समय आजाऊंगी.

सुदर्शन—(चकित हो कर) प्यारी ! क्या कहा.

लावण्य०—आज्ञा हो तो मातापिताके पास हो आऊं.

सुदर्शन—तो यह चितचकोर विना तुम्हारा चन्द्रमुख देखे कैसे धैर्य धारण करेगा. प्यारी ! जिन नयनोंको आपकी मनोहर मूर्ति देखेविना एक पलमात्रको कल नहीं पड़ती, और मीनकी भांति व्याकुल कर तड़फड़ाते लगने हैं, और पलक मारनेसे भी दुःखी होते हैं, और कहते हैं कि, विधाता निर्दयने पलक क्यों बनाये, जो हमारे देखनेमें बाधा डालते हैं, तुम्हारे पीछे इन नेत्रोंसे किसकी ओर देखूंगा, वह तो व्याकुल हो बौरेकी भांति जाने कहां २ दौड़े फिरेंगे.

लावण्य०—(सजलनयन कर) प्यारे ! यह तो तुम्हारे बोल कलेजेको छोलेडालते हैं, क्या करूं इधर कुआ उधर खाई.

सुदर्शन—(नेत्रोंमें जल भरकर) इस घनघोर काली घटाको देख २ यह दुखिया नेत्र रो रो कर आँसुओंकी नदी भरदेंगे, और यह अँधियारी रात और पहाड़सा दिन कैसे कटेगा, हे प्यारी ! हमारे भाये तो आजही महाप्रलय होजायगी (यह कह मूर्छित हो, पृथ्वीपर गिरपड़ा.)

लाव०—(चन्दन, केवड़ा, गुलाब, छिड़ककर) प्यारे ! क्यों इतने व्याकुल होते हो, सावधान हो, सावधान हो, मैं बहुत शीघ्र आऊंगी, क्या करूं स्वामी लोकलाजको बिसारे भी नहीं बनती, प्यारे ! मैं जाती कहां हूं, मन तो तुम्हारीही सेवाके लिये छोड़े जाती हूं, केवल यह तन है. जहां चाहे वहां जाय.

सुदर्शन—(दीर्घ स्वास भरकर) अच्छा प्यारी ! बलवानका मार्ग शिरपर.

लाव०—प्यारे ! कहीं स्त्री भी बलवान् होती सुनी है, हमारा तो नामही अबलाकरके जगतमें प्रसिद्ध है, आप सोच संकोच न कीजिये. मैं शीघ्र आऊंगी. (यह कह चलीजाती है और पीछेको देखती जाती है.)

सुदर्शन—(गद्गदकण्ठसे पुकारकर) हे प्यारी ! किञ्चिन्मात्र और ठहरिये, मुझे कुछ और कहना है.

लावण्य०—(लौटकर) अच्छा प्यारे कहो, क्या कहते हो.

सुदर्शन—अपना चन्द्रवदन इन लोचनचकोरोंको और दिखाती जाओ, इनकी तृप्ति नहीं होती, यह व्याकुल हुए जाते हैं.

लावण्य०—प्राणनाथ ! मेरे नयनोंकी भी तृप्ति नहीं होती, परन्तु लोकलाजके मारे जाती हूं (फिर चलदी.)

सुदर्शन—(घबराकर) प्यारी ! ठहर जइयो, एक बात कहनी और शेष रहगई.

लावण्य०—(सजल नेत्रोंसे) क्यों प्राणवल्लभ?

सुदर्शन—प्यारी ! अब कब दर्शन होगा?

लावण्य०—(सरोदन) कल प्रातःकाल.

सुदर्शन—(उच्चस्वरसे पुकारकर) हे प्राणेश्वरी ! क्षणमात्र और विलम्ब कीजिये गुप्त बात जो प्रयोजनकी थी सो तौ रहही गई.

लावण्य०—प्राणनाथ ! वह कौनसी बात है, शीघ्र कहिये. क्योंकि, यह समय कोतवालके आनेका है, जो मुझको उसने तुमसे बातें करते देखलिया तो बड़ा विघ्न होगा, न जानिये फिर क्या उत्पात प्रगट होजाय. इस कारण थोड़ी देरके लिये तुम भी कहीं छिपजाओ.

सुदर्शन—प्यारी ! यही बात मैंने विचारी थी, भयके स्थानमें कभी नहीं रहना चाहिये. व्यतिरिक्त हानिके कभी लाभही न होगा, कहीं निर्भय स्थानमें चलो. जो जीवनका आनन्द भी प्राप्त हो. और जो तुमको मातापितासे मिलना हो तो शीघ्र मिल आओ, और जो तुमसे हो सके तो तीन घोड़े भी लेती आओ, और जो कोतवालने पकड़लिया तो कहींके न रहे, सब अवस्था कारागारहीमें व्यतीत होगी.

लावण्य०—हे प्राणपति ! चलनेसे तो मुझे कुछ निषेध नहीं, परन्तु यह असमंजस है कि, इधर तो मातापिताकी दुर्नामता होगी, उधर आपके नामको बट्टा लगेगा, और मैं स्त्रियोंमें मुख दिखानेकी न रहूंगी, जहां एक बात खोटी होती है,

वहां चतुर लोग भूलकर भी पाँव नहीं धरते, यहाँ तो तीन अवगुण हैं, प्यारे! जो कुछ कहना था, मैं तो अपनी बुद्धिके अनुसार कहचुकी आगे आपकी इच्छा है. अब मुझको तो जानेकी आज्ञा दो, और इस बातकी बुराई भलाई पीछे विचार रखना. (रोकर चलदी.)

कोतवालका प्रवेश.

कोतवाल—अरे दुष्ट! कौन है जो राजकुमारीको पुकारता है, तुझको महाराज समरसिंहका कुछ भी भय नहीं. अब मैं तेरे हाथोंमें हथकड़ी डालकर, महाराजके सन्मुख लेचलूंगा, तू किसके कहनेसे स्त्रियोंके बागमें चलाआया.

सुदर्शन—देख! कटुवाक्य मुखसे न निकाल, अभी मारे घूंसोंके दांत तोड़ डालूंगा. हमने तेरा क्या अपराध किया है जो हाथ बांधनेका नाम लेता है?

कोतवाल—क्यों रे चोर, चोरी करना और ऊपरसे धमकाना, हमारे आगे तेरा एक छलबल न चलेगा, तू सावधान होजा, हम अभी तुझको पकड़कर महाराजके सन्मुख लिये चलते हैं.

सुदर्शन—अरे नीच दुर्बुद्धि, तेरी और तेरे साथियोंकी क्या सामर्थ्य है, जो वह हमसे बातभी कर सकें, और हाथ बांधनेको तो बड़ा मुंह चाहिये.

कोतवाल—अरे सिपाहियो! देखते क्या हो, अभी इस चोरको पकड़कर हाथ बांधलो; और महाराजके सन्मुख ले-

चलो. (सिपाही पकड़लो २ कहकर दौड़ते हैं और जवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका तृतीयगर्भाङ्क समाप्त.

चतुर्थ गर्भाङ्क.

स्थान राजा समरसिंहकी सभा.

(राजा समरसिंह सिंहासनपर विराजमान हैं, सचिव, सेनापति, सन्मुख खड़े हैं, सहस्रों मनुष्य हाथोंमें निवेदनपत्र लिये घूम रहे हैं, सुदर्शनको लेकर राजसभामें कोतवालका प्रवेश.)

कोतवा०—(दण्डवत् करके) महाराज ! मैं इस चोरको पकड़कर लाया हूं, इस दुष्टने कलसे बागमें बड़ा भारी उपद्रव मचा रक्खा है.

रा०समर०—यह कौन है, और इसने क्या उपद्रव मचाया ?

कोतवाल—(हाथ जोड़कर) महाराज ! कहनेयोग्य तो नहीं, परन्तु बेवशीसे कहनी पड़ी, प्रथम तो राजकुमारीकी पुष्पवाटिकामें विना आज्ञा चलागया, दूसरे न जानिये राजदुलारीपर क्या मोहनी डाल दी, वह इसपर मोहित है. इसने कहा तू मेरेसंग चल, राजनन्दिनीने उत्तरदिया मुझको तेरेसाथ चलनेसे निषेध नहीं, परन्तु मातापिताके नामको पा-

तक लगता है, यह कह वह चलीगई, और यह चाण्डाल वहीं खड़ा रहा. जब इस अत्याचारीसे कहा तू यहां कैसे आया? तो यह पापी युद्ध करनेको प्रस्तुत हुआ. इसने बहुतसे सिपाहियोंको मारडाला, बड़ी कठिनाईसे इस पाखंडीको पकड़ा है, आपके सन्मुख उपस्थित कर दिया, अब आपकी इच्छा, चाहे सो कीजिये.

रा० समर०—(क्रुद्ध होकर) अरे मूर्ख! तूने मेरा नाम नहीं सुना, जो सर्वत्र भूमण्डल मेरे नामसे कांपता है. सत्य कह तू कौनसे देशका वासी है, और यहां कैसे आया? वा तुझको किसीने बुलाया है?

सुदर्शन—सत्यही कहूंगा, हम प्रेमीलोग मिथ्या बोलना अत्यन्त बुरा समझते हैं. जबसे लावण्यवती प्राणप्यारीने, नयनोंकी तिरछी बरछी मेरे हृदयमें मारी है, उस चोटसे मारा लोटपोट होगया, और तनमनकी सब सुधिबुधि बिसर गई, न नींद है न भूख है, उन्मत्तोंकी भांति भटकता फिरता हूं, जिधरको नेत्र उठाकर देखता हूं, प्यारीही प्यारी दृष्टि आती है, जैसे वैसेकर रोता चिल्लाता सैकड़ों कष्ट उठाता, आपके नगरमें आया, और उस प्राणसंजीविनीका दर्शन पाया, मेरा मनोरथ परमात्माने पूर्ण कर दिया, अब प्राण रहैं चाहे न रहैं.

रा० समर०—मंत्री! सुना तुमने, यह नीच नराधम